दलित गरिमा और विकास का यथार्थ

4 फरवरी 2017, विकास अध्ययन संस्थान, जयपुर

अर्थव्यवस्था और दलित

राजस्थान क्षेत्रफल की दृष्टि में भारत का सबसे बड़ा राज्य है। राजस्थान, प्राचीन एवं आधुनिक संस्कृति का सुंदर एकीकरण है। दुरूह मरूस्थल एवं भारत की प्राचीनतम अरावली पर्वत श्रेणियों से घिरा यह राज्य अपनी परंपरागत कला और लोक संस्कृति के लिए जाना जाता है। राजस्थान एक तेज़ी से उभरती हुई अर्थव्यवस्था है। देश के सकल घरेलू उत्पाद में राजस्थान का योगदान लगभग 5 प्रतिशत है और इस हिसाब से यह देश का सातवां सबसे बड़ा राज्य है। पिछले दस वर्षों में 2004–05 से 2015–16 के बीच सकल राज्य घरेलू उत्पाद (जीएसडीपी) में 12.38 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि से विकास हुआ। वर्ष 2016–17 में सकल राज्य घरेलू उत्पाद 767167 करोड़ रूपये रहा जो कि वर्ष 2015–16 से 13.08 प्रतिशत अधिक रहा। राजस्थान आर्थिक समीक्षा 2015–16 के अनुसार सकल राज्य घरेलू उत्पाद में पिछले वर्ष की तुलना में 10.12 प्रतिशत की वृद्धि हुई। राज्य में प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष आय में भी वृद्धि दर्ज की गई है। 2015–16 में 8. 51 प्रतिशत की वृद्धि के साथ प्रति व्यक्ति आय 83423 रुपये रही। राज्य की अर्थव्यवस्था में औसतन 2010 से 2015 के दौरान 9.5 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई (बजट विश्लेषण, राजस्थान, पीआरएस)। अनुसूचित जाति कल्याण के लिए वर्ष 2015–16 में 9280 करोड़ रुपये आवंटित किए गए थे जिसे 2016–17 में 67.4 प्रतिशत बढ़ाकर 15538 करोड़ रुपये कर दिया गया। दूसरी ओर, सामाजिक एवं सामुदायिक सेवाओं में भी कुल बजट का 38.22 प्रतिशत खर्च करने का अनुमान लगाया गया था।

लेकिन इन तमाम आर्थिक आंकड़ों के बीच दलितों की सामाजिक - आर्थिक विकास के आंकड़े कमज़ोर दिखते हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार राज्य की कुल आबादी 6.85 करोड़ है जिसमें 1.22 करोड़ अनुसूचित जाति

के लोग हैं, जो कि कुल आबादी का 17.83 प्रतिशत है। इनमें अगर राज्य के अनुसूचित जनजाति और अल्पसंख्यकों को शामिल करें तो यह प्रदेश की कुल आबादी का 40 प्रतिशत हिस्सा है। ज़्यादातर अनुसूचित जाति/जनजाति के लोग भूमिहीन हैं या फ़िर उनके पास कम जोत की भूमि है। संसाधनों के अभाव और रोज़गार की कमी के कारण इस समुदाय के लोगों का आर्थिक विकास नहीं हो पा रहा है। आर्थिक सशक्तिकरण सामाजिक और राजनैतिक सशक्तिकरण की प्राथमिक शर्त है। इस समुदाय के 90 प्रतिशत लोग ग़रीबी रेखा के नीचे अपना जीवन गुज़ार रहे हैं। इनकी ग़रीबी, वंचना और बहिष्कार इन्हें और अधिक भेद्य बनाती है, ख़ासकर महिलाओं और बच्चों को। महिलाओं में निरक्षरता और बच्चों के स्कूल छोड़ने का दर सबसे ज़्यादा इसी समुदाय के लोगों में है। अनुसूचित जाति साक्षरता दर 49.83 प्रतिशत है जबकि प्रदेश की साक्षरता दर 67.06 प्रतिशत है। वहीं, दलित महिलाओं में साक्षरता दर 37.32 प्रतिशत है, जबकि राज्य की महिलाओं का साक्षरता दर 52.66 प्रतिशत है (जनगणना, 2011)। भोजन, शिक्षा, चिकित्सा, आवास जैसे मूलभूत सुविधाओं की पहुँच इस समुदाय में सबसे कम है। वंचित समुदायों के कल्याण के नाम पर आवंटित धनराशि भी पूरी तरह ख़र्च नहीं हो पाती। वर्ष 2015–16 में 1409.82 करोड़ रुपये वंचित वर्गों के कल्याण के रूप में स्वीकृत किए गए, जिनमें 109.11 करोड़ रुपये ही खर्च हुए (योजना विभाग, राजस्थान सरकार)।

अनुसूचित जाति सब प्लान के अंतर्गत आवंटन पर ग़ौर करें तो आबादी के हिसाब से राजस्थान में कुल योजना मद का 17 प्रतिशत से अधिक दलितों के विकास के लिए आवंटित होना चाहिए। लेकिन यह हिस्सा 2007–08 से 2012–13 के बीच हमेशा कम बना रहा।

वर्ष	अनुसूचित जाति सब प्लान के अंतर्गत आवंटन (प्रतिशत)	अनुसूचित जाति सब प्लान के अंतर्गत आवंटन में कमी (करोड़)
2007–08	2.31	1632.05
2008–09	3.13	1710.02
2009–10	2.71	1814.60
2010–11	5.96	1776.71
2011–12	7.63	1960.77
2012–13	8.11	2677.83
2013–14	9.81	2316.92

स्रोतः बीएआरसी, राजस्थान

अनुसूचित जाति सब प्लान के अन्तर्गत आर्थिक विकास की योजनाओं के माध्यम से अनुसूचित जाति के परिवारों की आय में वृद्धि हेतु विशेष केन्द्रीय सहायता उपलब्ध करवाई जाती है। यह राशि अनुसूचित जाति के कल्याण हेतु उन योजनाओं के तहत व्यय की जाती है, जहां इनके लिए राज्य की वार्षिक योजनाओं में पर्याप्त राशि उपलब्ध नहीं हो पाती है। हालांकि, यह मद भी पूरी तरह खर्च नहीं हो पाया।

वर्ष	भारत सरकार से प्राप्त राशि	व्यय राशि (लाखों में)
2010–11	3460.63	3420.56
2011–12	4301.05	4172.02
2012–13	5727.00	3746.25
2013–14	3167.00	3183.58
2014–15	6027.26	2440.25
2015–16	3438.30	1098.37

स्रोतः प्रयास एवं प्रगति 2015–16, प्रशासनिक प्रतिवेदन, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग, राजस्थान

आर्थिक क्षेत्र में देखें तो दलितों को आज भी बाजारों में भेदभाव का सामना करना पड़ता है, जिनमें श्रम बाजार भी शामिल है। ग्रामीण क्षेत्रों में दलितों को रेस्तरां में और बच्चों के लिए मिड-डे भोजन तैयार करने के लिए रसोइए का काम नहीं दिया जाता। यहां तक कि उन्हें वेटर का काम भी देने से परहेज किया जाता ह। उन्हें बड़ी जाति के श्रमिकों के मुकाबले कम दिन के लिए और कम पारिश्रमिक पर रोजगार दिया जाता है। जबकि कुछ दूसरे कार्यों के लिए उनसे जबरन काम कराया जाता है. दलितों को खेती की जमीन खरीदने में भी भेदभाव का सामना करना पड़ता है, इसी तरह शहरों में घरों के किराये के मामले में भी दलितों को भेदभाव झेलना पड़ता है। ग़ैर-कृषि रोज़गार और व्यापार के क्षेत्र में दलितों के साथ भेदभाव बरता जाता है। असीम प्रकाश ने अपनी पुस्तक 'दलित कैपिटल' में लिखा है कि विभिन्न बाजारों में अनुसूचित जाति के उद्यमियों और कारोबारियों को जातिगत बाधाओं का सामना करना पड़ा था। संपत्ति की मिल्कियत के मामले में 2012 में कुल ग्रामीण अनुसूचित परिवारों में से 20 प्रतिशत किसान थे और अन्य 14 प्रतिशत छोटे कारोबारी थे, जबकि शहरी इलाकों में यह अनुपात करीब 27 प्रतिशत था। 2005 के इकोनोमिक सर्वे ऑफ प्राइवेट एंटरप्राइसेज से पता चलता है कि देश के कारोबारी बाजार में अनुसूचित जाति का हिस्सा मात्र 10 प्रतिशत था, जो उनकी कुल आबादी से काफी कम है। दलित शिक्षा और नागरिक सुविधाओं में हिस्सेदारी के मामले में भी पीछे हैं। 2014 में उच्च शिक्षा के लिए नामांकन के मामले में अनुसूचित जाति का हिस्सा 22 प्रतिशत था, जबकि ऊंची जातियों का हिस्सा 42 फीसदी था। इस प्रकार जाति-आधारित भेदभाव और गरीबी दिखाती है कि कुछ हद तक सुधार के बावजूद दलित आज भी बड़े स्तर पर भेदभाव का सामना कर रहे

हैं। मानव विकास के मामले में उनके और बाकी के बीच अंतर है। अब भी उन्हें पूर्ण नागरिक का दर्जा हासिल नहीं है (सुखदेव थोराट, इंडिया टुडे, वार्षिकांक 2016)।

दलित अस्मिता एवं सामाजिक न्याय

क़ानून के समक्ष समानता और मूलभूत मानवाधिकार व नागरिक अधिकार को अपनाने के छः दशक से अधिक बीत जाने के बाद भी दलित वंचना और बहिष्कार के शिकार हैं। दलित समाज आज भी अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़ रहा है। 11 राज्यों के 565 गाँव में किए गए अध्ययन के अनुसार 38 प्रतिशत सरकारी विद्यालयों में दलित बच्चे मध्यान भोजन के दौरान अलग बैठते हैं, 20 प्रतिशत बच्चे अलग पानी पीते हैं, एक तिहाई स्वास्थ्य कर्मी दलितों के घर नहीं जाते (शाह, मंदर, थोराट, देशपांडे और बाविस्कर, ग्रामीण भारत में अस्पृश्यता 2006)। इसी अध्ययन के मुताबिक 35.80 प्रतिशत दलितों को गाँव की दुकान में प्रवेश नहीं कर पाते और 64 प्रतिशत दलित मंदिरों में प्रवेश नहीं कर पाते। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की 2012 की रिपोर्ट के अनुसार आधे से अधिक दलित बच्चे कुपोषण के शिकार हैं जिनमें 21 प्रतिशत अत्यंत कुपोषित हैं और 12 प्रतिशत बच्चे अपना पाँचवां जन्मदिन नहीं मना पाते हैं।

राजस्थान के संदर्भ में देखें तो स्थिति चिंताजनक बनी हुई है। एक अध्ययन के मुताबिक राजस्थान और गुजरात के गाँव में 94 प्रतिशत दलित बच्चे चिकित्सा कर्मियों द्वारा किसी न किसी रूप में भेदभाव के शिकार हुए। आधे से अधिक दलित बच्चों को दवा देते समय छूते भी नहीं हैं (आचार्या एस संघमित्र, 2007)। एनएफएचएस३ के मुताबिक राजस्थान में तीन साल से कम उम्र के 46 प्रतिशत दलित बच्चे कम वज़न के हैं जबकि 35 प्रतिशत प्रसव ही प्रशिक्षित कर्मियों द्वारा किया जाता है।

राजस्थान में महिलाओं की स्थिति अत्यंत ही दयनीय है। अजीविका के साधनों का अत्यंत अभाव है। काम के विकल्पों में कमी के चलते महिलाओं को अमानवीय और असम्मानजनक कार्य करने पड़ते हैं। इन लोगों को आज भी बंधुआ मज़दूर के रूप में अपनी ज़िंदगी गुज़ारनी पड़ती है। कुछ दलित पुरुषों के पास तो थोड़ी बहुत ज़मीन है भी, लेकिन महिलाएं अधिकतर भूमिहीन ही हैं। भूमि के अभाव में महिलाओं को किसी तरह का कोई ऋण भी उपलब्ध नहीं हो पाता है जैसे कृषि औज़ार, पंप सेट आदि (दलित वीमेन इन राजस्थान, प्यूसर और सीडीआर)।

यह समाज आज भी सर पर मैला ढोने का काम कर रहा है। सामाजिक आर्थिक जनगणना 2011 के अनुसार राजस्थान में 3498 दलित सर पर मैला ढो रहे हैं जिनमें 577 लोगों की ही पहचान हो पाई है (पीआईबी, 15 दिसंबर 2015, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार)। चिन्हित किए गए लोगों में दौसा में 124, टोंक में 38, भरतपुर में 17 और सवाई माधोपुर में 177 शामिल हैं।

चिंताजनक हिंसा

पूरे देश में दलितों के नागरिक अधिकारों का हनन और उनके प्रति हिंसा बदस्तूर जारी है। 1995 – 2014 के बीच राष्ट्रीय स्तर पर जातिगत भेदभाव और अत्याचार के 2.43 लाख मामले दर्ज हुए। इस हिसाब से साल में औसतन 13,000 मामले दर्ज हुए। एनसीआरबी की रिपोर्ट के मुताबिक 2015 में 45,000 से अधिक मामले दर्ज हुए जिनमें 38,000 से अधिक ऐसे मामले थे जिनमें भारतीय दंड संहिता के विभिन्न धाराओं के साथ साथ अनुसूचित जाति/जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम के तहत मामले दर्ज हुए। जबकि 6000 से अधिक मामलों में अत्याचार निवारण अधिनियम के तहत मुकदमे दर्ज नहीं किए गए। रिपोर्ट के मुताबिक दलितों के प्रति

अपराधों में आरोप पत्र दायर करने का दर 94 प्रतिशत है जबकि सज़ा का दर मात्र 27.6 प्रतिशत है। यानि अधिकतर मामलों में आरोप पत्र दाखिल हो जाते हैं लेकिन सज़ा नहीं मिल पाती। देश की विभिन्न अदालतों में दलित हिंसा के 86 प्रतिशत से अधिक मामले लंबित हैं।

राजस्थान दलितों के प्रति हिंसा के मामले में देश के अग्रणी राज्यों में शामिल हैं। अपराध की संख्या के हिसाब से देखें तो यह प्रदेश दलित हिंसा में उत्तर प्रदेश के बाद दूसरा सबसे बड़ा राज्य है। यहाँ 2015 में दलित हिंसा के 6000 से अधिक मामले दर्ज हुए। राजस्थान में देश के कुल दलित हिंसा के मामलों में से 15.5 प्रतिशत मामले दर्ज हुए। दलितों के प्रति अपराध दर में भी राजस्थान पहले स्थान पर है। दलित अपराध दर का राष्ट्रीय औसत 22. 3 प्रतिशत है जबकि राजस्थान में 57.3 प्रतिशत है।

दलितों के प्रति अत्याचार की ऐसी अनगिनत खबरें हैं जिनमें से कुछ प्रकाश में आई और कुछ दब गईं। आश्चर्य की बात यह है कि जो खबर सामने आती भी है उन सभी मामलों में एफआईआर दर्ज नहीं हो पाती। दलित और कानून (गिरीश अग्रवाल और कॉलिन गोन्साल्विस) के अनुसार 'एक ओर अत्याचार होने या अस्पृश्यता का व्यवहार होने पर प्राथमिकी (एफआईआर) दर्ज कराना कानूनी प्रक्रिया प्रारंभ करने के लिए आवश्यक कदम है, वहीं दूसरी ओर यही प्राथमिकी दलितों को कानून की सहायता लेने से रोकने के लिए पुलिस का मूल उपकरण बन जाती है। दलितों की शिकायतों को एफआईआर के रूप में दर्ज न करके या कानून की गलत धाराओं में दर्ज करके या अनुसूचित जाति-जनजाति अधिनियम के प्रावधानों को शामिल न करके पुलिस कानून और व्यवस्था के अपने आधिकारिक कर्तव्य के साथ ही कानून के पालन में भी असफल रहती है'। दलित चेतना की जागृति के बीच दलितों के प्रति हिंसा के आंकड़े भी बढ़ रहे हैं। एक

ओर आर्थिक प्रगति और विकास के दावे किए जाते हैं वहीं दूसरी ओर दलितों के प्रति हिंसा का ग्राफ़ नीचे नहीं आ पा रहा है, बल्कि हिंसा का स्वरूप और अधिक विकृत व बर्बर होता जा रहा है। हर 18 मिनट पर एक दलित हिंसा की घटना घटती है, रोज़ औसतन तीन महिलाएं बलात्कार की शिकार होती हैं, 20 दलित मारे जाते हैं और दो दलितों का घर जला दिया जाता है (राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, 2010)।

दलित पीड़ितों को न्याय दिलाने की दिशा में सबसे बड़ा अवरोध उनके मामलों की जांच-पड़ताल और आरोप पत्र तय करते समय नजर आती है। ज्यादातर मामलों में जांच-पड़ताल नहीं की जाती है, और साक्ष्य के अभाव में गंभीर किस्म के अपराधों के बावजूद न तो सुनवाई हो पाती है और न ही कोई कार्रवाई होती है। अक्सर अपराधी छूट जाते हैं।

अधिनियम में संशोधन

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अधिनियम 1989 को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) संशोधन विधेयक 2015 लाया गया। 31 दिसंबर 2015 को इस बिल को राष्ट्रपति की मंजूरी भी मिली थी जिसके बाद 1 जनवरी 2016 को इसे अधिसूचित कर दिया गया। हालाँकि, इस नए अधिनियम को अस्तित्व में आने में 25 दिन लग गए। पुराने नियमों को बदलकर संशोधित नियमों में सरकार को सक्षम होने के लिए 25 दिन लगे और 26 जनवरी 2016 को यह अधिनियम पूरी तरह से लागू हो गया। मामलों का पंजीकरण न होना, जाँच, गिरफ्तारी और आरोप पत्र दाखिल करने में देरी और सजा दर में कमी पुराने अधिनियम की कुछ मुख्य बाधाएं थीं।

संशोधित अधिनियम में विशेष सरकारी वकीलों और विशेष अदालतों की स्थापना के लिए कहा गया है जिससे मामलों का शीघ्र निपटारा हो सके। हालांकि, संशोधन के एक वर्ष पूरा हो जाने के बाद भी अभी तक देश के 22 राज्यों में विशेष अदालतों का गठन नहीं हुआ है। विशेष अदालतों को अपराधों का संज्ञान लेने और आरोप पत्र दाखिल करने की तारीख से दो महीने के भीतर ट्रायल पूरा करने का अधिकार है। इन विशेष अदालतों का गठन जिला स्तर पर किया जाना है। इसके फैसले को उच्च न्यायालय में चुनौती दी जा सकती है जिसकी सुनवाई भी दो महीने के अंदर कर लेनी होगी। पुलिस को केस दर्ज होने के 60 दिनों के अंदर चार्जशीट दाखिल करनी होगी, देरी होने पर जाँच अधिकारियों को लिखित रूप से देरी के कारण का जवाब देना होगा।

संशोधित अधिनियम में 'पीड़ितों और गवाहों के अधिकारों' पर भी एक अध्याय है जिसमें यह राज्य का कर्तव्य और जिम्मेदारी है कि वह पीड़ितों, उनके आश्रितों और गवाहों को किसी भी तरह की हिंसा, धमकी, प्रलोभन आदि से सुरक्षा दे। संशोधित अधिनियम ने पीड़ितों और उनके आश्रितों को जमानत की कार्यवाही सहित अदालत की कार्यवाही की उचित और समय पर जानकारी का पूरा अधिकार दिया है और विशेष सरकारी वकील और राज्य सरकार इन सभी कार्यवाही की जानकारी देने के लिए बाध्य हैं। अदालतों की कार्यवाही में पीड़ितों को भी अपनी बात रखने का अधिकार दिया गया है।

संशोधित अधिनियम में पुराने अधिनियम की धारा ३ में संशोधन करते हुए कुछ नए अपराध भी जोड़े गए हैं, जैसे - किसी भी अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को अस्पताल, शैक्षिक संस्थान, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र या अन्य किसी सार्वजनिक जगह पर जाने से रोकना, सार्वजनिक उपयोग के लिए रखे बर्तनों का उपयोग न करने देना, लिखित व

बोले गए शब्दों द्वारा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के प्रति घृणा या दुर्भावना को बढ़ावा देना और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को बहिष्कार की धमकी देना, सिंचाई के साधन का उपयोग करने से रोकना, वनाधिकार को रोकना, सामाजिक व आर्थिक रूप से बहिष्कृत करना, चुनाव में भाग लेने से रोकना, घर/गाँव के बाहर रहने पर मजबूर करना, महिलाओं के प्रति लिंगभेदी शब्दों का प्रयोग करना, उन्हें घूरना और पीछा करना सहित कई अपराध शामिल किए गए हैं। ऐसी कोई भी गतिविधि जो दलित की गरिमा के खिलाफ और अपमानजनक हो, जैसे-सिर या मूँछ मुंडवाना, जूते/चप्पल की माला पहनाना, दलित महिलाओं को मंदिरों में देवदासी बनाना या इसी तरह की अन्य गतिविधि आदि को नए कानून में अपराध की श्रेणी में शामिल किया गया है। गैंगरेप, हत्या और एसिड अटैक के शिकार दलित समुदाय के लोगों को 8.5 लाख रुपये के मुआवजे का प्रावधान है। वहीं बलात्कार की शिकार महिला को 5 लाख रुपये के मुआवजे का प्रावधान है। पुराने कानून में 22 ऐसे अपराधों की सूची थी जिनमें 60 हजार से लेकर 5 लाख रुपये के मुआवजे का प्रावधान था, जबकि नए कानून में 47 अपराधों की सूची है जिनमें एक लाख रुपये से 8.5 लाख रुपये के मुआवजे का प्रावधान है।

पहले इस कानून में भारतीय दण्ड संहिता की उन्हीं धाराओं को शामिल किया गया था जिनमें 10 वर्ष या उससे अधिक की सजा का प्रावधान था, लेकिन नए संशोधन में ऐसे अपराधों को भी शामिल किया गया है जिनमें 10 वर्ष से कम की सजा का प्रावधान है, जैसे- गंभीर रूप से चोट पहुँचाना, अपहरण आदि।

दलित अस्मिता और अधिकारों की पैरवी के उद्देश्य से एक राज्य स्तरीय परिचर्चा का आयोजन किया जा रहा है। इस परिचर्चा में ऐसे बिंदू चिन्हित

किए जायेंगे जिस पर सरकार व समाज से त्वरित कार्रवाई की अपेक्षा है। इसके अलावा राज्य के दलितों के अधिकारों को सम्मान, उनके प्रति हिंसा व अपराध पर रोक पर तात्कालिक व दीर्घकालिक उपायों पर विचार करके उसके क्रियान्वयन में सरकारी और ग़ैर सरकारी संस्थाओं की सहभागिता स्थापित करने का प्रयास किया जाएगा। यह परिचर्चा पैरवी, सिकोइडिकोन और दलित अधिकार केंद्र की तरफ़ से आयोजित की जा रही है।